स्त्री पाठ : दुनिया की सबसे पुरानी सभ्यता

दिनेश कुमार पाल
(शोध - छात्र)
हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज
मो. 9559547136
ई- मेल: dineshkumarpal6126@gmail.com
पता - बैरमपुर बैरमपुर, कौशाम्बी, 212214

शोध- सारांश

मानव सभ्यता का विकास प्रकृति के कोख से हुआ है। चाहे वह नर हो या फिर मादा दोनों का रख-रखाव प्रकृति एक समान रूप से करती है और उनका पालन -पोषण भी एक समान ही करती है। नर और मादा में अंतर तो बुद्धिजीवी मानव के विकसित होने पर होने लगा। जब से यह अंतर मानव प्रवृत्ति में घुसा तभी से मादा पर अत्याचार होने लगा। दुनिया की कोई भी सभ्यता एवं संस्कृति स्त्री के बिना विकसित नहीं हो सकती। सभ्यताओं एवं संस्कृतियों के विकसित होने में स्त्री का बहुत ही योगदान रहा है। इसके योगदान को किसी परिसीमन में बांधा या सराहा नहीं जा सकता। इतिहास इस बात का गवाह है कि जब सभ्यताएं एवं संस्कृति विकसित नहीं हुई थी तब भी एक मादा शिशु को जन्म देती है, और प्रसवपीड़ा का दर्द सहती रही। स्त्री- पाठ का सम्बन्ध मानवीय सभ्यताओं से जुड़ा हुआ है। स्त्री- पाठ का इतिहास दुनिया की किसी भी सभ्यता के इतिहास से भी पुराना है। हां यह अलग बात है कि समय-समय पर दुनिया में अलग-अलग हिस्सों में सभ्यताएं और संस्कृतियों का विकास हुआ और उनका अलग-अलग स्त्री-पाठ विकसित हुआ। स्त्रियों के बिना इन्सानी सृष्टि नहीं चल सकती। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रोफेसर भूरेलाल का मानना है कि, "स्त्री के बिना मानवीय जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती।" स्त्री मानवीय भंगिमाओं को भी धारण करती है।

बीज- शब्द : *इन्सानी, सभ्यताएं, जातिवाद, भ्रूणहत्या, अनचाहे गर्भ, सम्वेदनशीलता, भयवाह, हकीकत, आदि ।*

परिकल्पना : प्रकृति के मुहाने से इन्सानी सभ्यता के बहाने स्त्री के बचाने के साथ- साथ पूरी कायनात को बचाने की बात।

आमुख-

मनुष्य का जीवन प्रकृति की गोद में विकसित हुआ, अतः प्रकृति को चलाने के लिए स्त्री का होना बेहद जरूरी है। बिना स्त्री के प्रकृति का नीयति-चक्र नहीं चल सकता। स्त्री के खत्म होते ही संपूर्ण मानवता खत्म हो जाएगी। प्रकृति अपनी धूरी पर रुक जाएगी। इस दुनिया में चारों तरफ पानी, पहाड़, जंगल, उबड़-खाबड़ जमीन शेष रह जाएगी। इस चिंता को व्यक्त करते हुए छायावादी महान कवि 'जयशंकर प्रसाद' 'कामायनी' में करतें हैं -

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर, बैठ शिला की शीतल छांव।

एक पुरुष भीगे नैनो से देख रहा था प्रलय-प्रवाह।।

अपने में सब कुछ भर कैसे- व्यक्ति विकास करेगा।

यह एकांत स्वार्थ भीषण है अपना नाश करेगा।।[१]

कामायनी के मनु की तरह 'पंकज सुबीर', अपनी कहानी 'दो एकांत' में इस भीषण विध्वंसकारी, प्रलयकारी स्थिति की चिंता व्यक्त करते हुए कहते हैं कि, "पता नहीं की ऐसा होगा अथवा नहीं होगा, तो कब होगा, लेकिन कई बार ऐसा स्वप्न आता है कि सचमुच ऐसा हो गया है। चूंकि उन सब में स्वयं को पाता हूं, इसलिए कह नहीं सकता कि ये काफी समय बाद होगा। इसलिए जब इसे लिखने का मन में आया तो ऐसा लगा कि आज ही हो रहा है। सो लिखते समय वर्तमान को ही कालखंड मान लिया है। सारे पात्र आज के ही हैं। आज मतलब, आज। कहीं ये कहने की कोशिश की है कि 2050 में होगा, या उसके बाद के किसी समय में होगा। बस ऐसा लगा कि ये हो गया है और जब लगा कि ऐसा हो गया है तो बस कहानी का होना तय हो गया है। ये अंत से पहले का अंत है। वो अन्त जो आखिरी अंत से भी ज्यादा भयावह होगा।"(दो एकांत,पृष्ठ संख्या-१४०)

हिंदी साहित्य में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक स्त्री को, सिद्धों ने स्त्री का संसर्ग अनिवार्य माना, माहामुद्रा के रूप, माया, अबला तुम्हारी हाय यही कहानी, नारी केवल तुम श्रद्धा हो, ही के रूप में देखा गया है। उसे सृष्टि की इंसानी सभ्यता के रूप में कभी भी नहीं देखा गया। मानव समाज में स्त्री के अस्तित्व को मिटाने की कोशिश बड़े सहज से किया जाता रहा है। स्त्री को देवी, कालरात्रि, डायन, आदि से संबोधित करके एक स्त्री को मिटाने की कोशिश की जाती रही है।

"प्राचीन काल में अरब में, और भारत में भी, बहुदा लोग, लड़कियों को अपने सिर नीचा कराने वाली समझकर मार डालते थे, उन्हें माताओं की जरूरत ही ना हो, या यह समझते हो कि केवल पुरुषों से सृष्टि कायम रह सकती है।"[२] "जहां तक प्रकृति बाधक ना हो स्त्री और पुरुषों के अधिकार समान होना ही न्याय और मनुष्यता है।"[३] "मनुष्य पशुता से उन्नत होकर मनुष्यता तक पहुंचता है। पशुओं में लिंग भेद के कारण नर-मादा को छोटा नहीं समझता, न मादा नर से निर्बल ही होती है।"[४] "सच तो यह है की नारियां आज गुलामों की गुलाम दासानुदास हैं। प्रकृति के इतिहास में खोजने वाले दूरदर्शी विद्वान कहते हैं कि मनुष्य की आदिम अवस्था में स्त्रियाँ दासी नहीं थीं।"[५]

'थमेगा नहीं विद्रोह' की चावली का कथन है कि "गुर्जर, जाट, चमार,..... बाभन, नाई, चूहे सब साले एक जैसे ही हैं। पाप स्वयं करते हैं, बेटियों को जिम्मेदार ठहराते हैं। मर्दों द्वारा तय शर्तों और किलेबंदी से औरत तनिक भी इधर-उधर हुई कि इनकी मूछों पर खतरा टूट पड़ता है फिर चाहे वह औरत इनकी माँ ही क्यों ना हो उसकी गर्दन उड़ाने में भी यह मर्द एक क्षण के लिए हिचकता नहीं है, स्वयं चाहे जहां मुंह मारता फिरे, जिस चाहे घाट का पानी पीता फिरे, इनकी इज्जत पर कोई आंच नहीं आती है।"[६]

स्त्रियों को अपनी संपत्ति मात्र समझना, वर्तमान समय में जातिवाद के साथ-साथ लिंगानुपात भी तेजी से बढ़ रही है। गरीबी के चलते गरीब मजदूर व्यक्ति को अपनी घर के औरतों का भी सौदा करना पड़ता है, या बेचना पड़ता है। तथाकथित हिन्दूओ के द्वारा यह कार्य कराए जाते हैं। अजंता, एलोरा, खजुराहो, कोणार्क मंदिरों में स्थापत्य और मूर्तिकला में पशुओं के समान मैथुन रथ मांसल मानव तनों को बेशर्मी से दर्शाया गया है। कोणार्क एवं खजुराहो में वस्त्र विहीन नारी तन का चित्रण किया गया है। यह चित्रण किसी सभ्यता एवं संस्कृति की पहचान पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करता है।

"इस हारामी पाठक जी आर्य ने मुझे आरिया समाज के मंदिर में ही अपनी इज्जत गवां कर .....भंगी होकर भी बेटी, बहन की लाज उतनी ही अमूल्य होती है जितनी बाभन, बनियों, राजपूतों की होती है।"[७] "मेरी सौत लाकर भी जो अब तक यह मेरा खसम पिता नहीं बन पाया है सो इसलिए कि कमी उसी में है, न कमी मेरे में थी, और न ही कमी मेरे सौत में है। मर्द लेकिन इसे स्वीकारते डरतें हैं तथा और एक प्रयोग के चक्कर में, और एक स्त्री का जीवन बर्बाद करते हैं, लेकिन अपनी कमी स्वीकार तब भी नहीं करते हैं। लगभग अस्सी प्रतिशत मामलों में होता है तो मर्द बांझ, लेकिन पूरा समाज बांझ की गाली देता है औरत को।"[८]

पृथ्वी से लड़कियां अचानक नहीं मिट गयीं उन्हें मिटाने में पुरुष सत्ता की एक पूरी कायनात लगी हुई थी। जिससे एक स्त्री ही अपने जन्म देने वाली बच्ची को बचाने विफल रही है। "इमोशन से जुड़ी हुई मुख्य शै तो समाप्त हो चुकी है, या शायद समाप्त होने वाली है। और ये जो समाप्त होना है, ये रातों-रात नहीं हुआ है, बल्कि कई बरसों से धीरे-धीरे करके किया गया है। जब यह किया जा रहा था, तब किसी ने भी नहीं सोचा था कि सारा ही समाप्त हो जाएगा। हर कोई तो ये सोच रहा था कि मैं तो केवल अपने हिस्से का ही समाप्त कर रहा हूं, लेकिन जरूरत पड़ने पर दूसरों के पास तो ये उपलब्ध होगा ही। यही सब ने सोचा और पता तब चला, जब ये शै पूरी तरह से ही खत्म होने पर आ गई है।"(दो एकांत, पृष्ठ-संख्या- १४१)

कथाकार पंकज सुबीर ने अपनी इस कहानी के माध्यम से मनुष्य को आगाह करतें हुए कहतें हैं, "ये तो बरसों से किए जा रहे कर्मों का नतीजा था, इसमें हमने क्या किया और हमारे बापों ने क्या किया? इसकी बहस करने से कोई मतलब नहीं है। जो होना था, हो चुका। अब तो यह सोचना है कि आगे क्या होगा। बार-बार एक ही बात का रोना रोने से कुछ नहीं होने वाला। हमारी पीढ़ी ने बंदूकें और तोपें लेकर खत्म नहीं किया है, जाने कितने बरसों से धीरे-धीरे होता रहा आखिर में ये हो गया।" (दो एकांत, पृष्ठ संख्या-१४३) यहाँ कथाकार के दूर दृष्टि का भी परिचय होता है। ये सब एक- दो वर्ष में नहीं हुआ, इसे खत्म करने के लिए कई सलतनें लगीं थी।

इस पूरी कहानी में बुजुर्ग की बतों से यह अनुमान लगाया जा सकता कि वह कितना संत्रास में है। बुजुर्ग के एक- एक शब्द में गहरी वेदना को महसूस किया जा सकता है जो अपने पोते को बताने के लिए हिम्मत जूटा रहा है। "कह दिया न कि आज बता दूंगा, जो भी पूछोगे, मगर अभी नहीं बताऊंगा, रात को बताऊंगा। अभी तुम जाओ कामकाज देखो, आराम से रात को बातें करेंगे। बात इतनी छोटी नहीं है कि इतनी जल्दी हो जाए। अभी तुम जानते ही क्या हो।"(दो एकांत, पृष्ठ संख्या-१४८)

"नहीं रही, यही कहा था मैंने? वह झूठ था। सच यही है कि ऐसा कुछ भी नहीं हुआ था, बल्कि मुझे तो यह भी नहीं पता कि वो है कहां, और मुझे ही क्या किसी को भी नहीं पता कि ये जो तस्वीर में तुम्हारे पिता के साथ बैठी है और जो तुम्हारी मां है, ये कहां है।"(दो एकांत,पृष्ठ संख्या-१५०) बुजुर्ग के इस कथन से मालूम होता है कि स्त्री के बिना पृथ्वी खाली नज़र आतीं है। एक स्त्री ही पृथ्वी को हरा भरा कर सकती है। वर्तमान समय में सरकार के द्वारा विकास के नाम पर जिस तेजी से पेड़-पौधों को कटा जा रहा है। एक दिन आयेगा कि मनुष्य जीवन जीने के लिए मोहताज हो जाएगा। इसी तरह स्त्रियों को भी धीरे- धीरे करके पुरुषों के द्वारा खत्म कर दिया गया या किया जा रहा है।

"ये रातों-रात नहीं हुआ था। बहुत समय से धीरे-धीरे हो रहा था। बहुत सालों से। धीरे-धीरे, आहिस्ता-आहिस्ता। कोई नहीं जानता था कि यह जो धीरे-धीरे हो रहा है, ये कभी एकदम यहां तक भी पहुंचा देगा। सैकड़ों बरस लग गए इसको होने में, लेकिन यह हो कर रहा।"(दो एकांत, पृष्ठ संख्या-१५०)

स्त्री को अर्धांगिनी कहा जाता है, लेकिन उसी अर्धांगिनी को किसी की पत्नी, बेटी,बहू,माता बनने से पहले खत्म कर दिया जाता है। स्त्री को आधे देश की आबादी माना जाता है, लेकिन उसी आधे आबादी को इतने बड़े भू-भाग रहने ही नहीं जाता। बल्कि उसके अस्तित्व को मिटाने की जद्दोजहद लगीं हुई थी। यहाँ कथाकार पंकज सुबीर वर्तालाप शैली में बूढ़े और युवक के बीच बात-चीत में महसूस किया जा सकता है- "मेरे पिताजी की जब शादी हुई तो उसके लिए क्या-क्या करना पड़ा था मेरे दादाजी को। उस समय ये सब दिखने लगा था कि अब कुछ समय बाद ये सब होने वाला है। हमारे गांव और आस-पास के पचासों गांव में कोई लड़की थी ही नहीं किसी के घर में। सबके घरों में केवल लड़के थे। बस लड़के। मुरझाए हुए, सवालों की तरह घर में घूमते फिरते नजर आते लड़के। लड़के, जो कब आदमियों में बदल जाते थे, पता ही नहीं चलता था। यूं ही बदल जाते थे, बस। कहीं कुछ भी नहीं था उनके लिए, धीरे-धीरे आहिस्ता आहिस्ता सब लड़कियां खत्म हो गई थी। खत्म हो गई थी या कर दी गई थी। वो आबादी, जो आधी आबादी कहलाती थी, उसे खत्म कर दिया गया था। चली गई थी सारी लड़कियां जाने कहां, जाने कौन देश..... "(दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १५०-५१)

एक स्त्री अपना जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। लड़कियाँ जन्म लेते या जन्मते ही मौत के भेंट चढ़ा दी जातीं हैं। प्रचीन समय और आधुनिक समय में कोई विशेष बदलाव देखने को नहीं मिलता। या ऐसा भी कहा जा सकता है कि प्रचीन और आधुनिक समय में सिर्फ समय आगे बढ़ा हैं। बांकी सब वैसे ही जैसे प्रचीन समय में होता रहा है। हां कार्य करने की प्रवृत्ति थोड़ी बदली है। दादा,परदादाओं के समय में अगर यह मालूम हो गया है कि महिला के गर्भ में बच्ची है तो उसको गर्भ में ही मार दिया जाता है और अगर ऐसा नहीं हो सका तो उसके पैदा होते ही दूध में डूबो कर मार दिया जाता है, अथवा गाँव के बाहर झोले में भर कर किसी पेड़ में लटका दिया जाता है, या फिर मटकी में भर कर किसी तालाब में डूबो दिया जाता है। लेकिन आधुनिक समय में इससे भी भयावह कर्म किया जाता है। एक स्त्री का पहले जबरन बलात्कार किया जाता है और फिर उसको मार दिया जाता है। शिशु अवस्था में तो बच्ची अपने ऊपर हुए आत्याचार के आभास से सम्वेदनशील नहीं होती लेकिन वर्तमान समय में तो लड़की अपने ऊपर हुए आत्याचार से सम्वेदित होतीं हैं। पुरुषों की संवेदनशीलता मर गई है। भारतीय समाज की बड़ी हकीकताओं में से एक दिलदहला वाली घटनाएं हमारे पितृसत्तात्मक में होती रही हैं। एक स्त्री के मनचाहे गर्भ

के अधिकार को उससे छीन लिया गया है, उसके गर्भ में उसका ही कोई अधिकार नहीं रहा गया। स्त्री को सिर्फ और सिर्फ बच्चा पैदा करने की मशीन के रूप में देखा जाता है। वर्तमान में सम्वैधानिक तौर पर स्त्रियों की स्वतंत्रता और पढ़ने- लिखने, खेलने आदि अधिकार की बात की जा रही है, लेकिन समस्या इस बात की है पहले हमें स्त्रियों को बचाना होगा, और स्त्री और पुरुष के लिंगानुपात में समानता लाना होगा, फिर उसके बाद हम उनके अधिकारों की बात कर पाएंगे। "कहीं नहीं गई, हमने खत्म कर दी हमने। हमने, हम, जो दूसरे हर रूप में स्त्री को पसंद करते थे, लेकिन बेटी के रूप में से देखते ही हमें जाने क्या हो जाता था। पहले कई सालों तक तो यह होता रहा कि पैदा होने के बाद उसे खत्म किया जाता था। उस समय पैदा होने से पहले ही खत्म करना पड़ता था, क्योंकि तब पैदा होने के पहले पता नहीं चलता था कि पैदा होने वाली संतान नर है या मादा, मगर खत्म तब भी कर दिया जाता था। कभी पैदा होते ही खाट के पाए से दबाकर, तो कभी किसी औरत के स्तनों पर नीला तूतिया लगा कर उसका दूध पिला कर। बाहर खबर आती थी कि मरी हुई लड़की हुई है। समझने वाले समझ जाते थे कि लड़की पैदा होकर मरी है। कोई कुछ नहीं बोलता था, सबको यही करना होता था। एक मादा, एक और मादा को पैदा करती थी और फिर कई सारी मादाएं मिलकर उस को खत्म कर देती थीं। बाहर खाट पर बैठे पुरुष इंतजार करते थे, दोनों में से किसी एक खबर के आने का। या तो ये खबर की बेटा हुआ है बधाई हो, या ये की लड़की हुई है मरी हुई।"(दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १५१-१५२)

सदियों से समाज ने आर्थिक स्वार्थ में नवजात बालिका के पैदा होते ही खत्म करना अच्छा सोचा। लेकिन यह नहीं सोचा कि यह समस्या अपने आप ही समस्या बन जाएगी।"[९] "सदियों से इस असीम सृष्टि के बीच प्रश्नचिन्ह- सा खड़ा मानव का लघु आकार अपने अस्तित्व की पहचान को टटोलता रहा है। मैं कौन हूं? क्यों हूं? इस चराचर सृष्टि में मेरी क्या जगह है? मेरा उद्गम और अंत क्या है?"[१०]

" खबर सुनते ही वे पुरुष उठकर खड़े हो जाते थे, नर पैदा होने पर बोतल खोलने की तैयारियां करने के लिए और मादा पैदा होने पर उसे दफनाने की तैयारियां करने के लिए। कमरे में पड़ी वह मादा तब तक मां नहीं बनती थी जब तक कि वह नर नहीं जनती थी" (दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १५२)

वर्तमान समय में सरकार लड़कियों को बचाने के लिए चिकित्सालयों में डी एन ए टेस्ट पर रोक लगा रखी है और टेस्ट करने और करवाने वाले के ऊपर कारवाई भी। लेकिन फिर कोई फर्क नहीं पड़ने वाला, अब तो बच्चीयों को गर्भ के बहर उसके वजूद से खेल कर खत्म करने का नया तरिका अपनाया जाता है। "ये सब बहुत पहले की बातें हैं। बाद में काफी बदलाव आ गया था, अब लड़की को मारने के लिए उसके पैदा होने का इंतजार नहीं करना पड़ता था। वो तो तुमको पता ही है पेट में ही पता लगने लगा था कि जो बन रहा है, वह नर है कि मादा। " (दो एकांत, पृष्ठ संख्या-१५२)

स्त्री के स्पर्श करने की अनुभूति अर्थात फिलिंग को भी कुदेरा गया है, कि एक स्त्री क्या सोचती है अथवा क्या नहीं सोचती है । 'दो एकांत' कहानी पंकज सुबीर के 'महुआ घटवारी तथा अन्य कहानियाँ' में संकलित है। पंकज सुबीर की कहानी 'दो एकांत' के कलेवर को 'ए नेशन विदाउट वूमेन' फिल्म से जोड़ कर देखा जा सकता है। इस फिल्म में और इस कहानी में अंतर केवल यह है कि यहां एक औरत को हर वर्ष एक बच्चा पैदा करने के लिए

उसके बाप के द्वारा बेच दिया जाता है लेकिन इस फिल्म में भी एक पिता के द्वारा एक लड़की को पैसे के लालच में चार लड़कों के लिए या ऐसा भी कहा जा सकता है कि पूरे गाँव के लिए बेंच दिया जाता है। जिसमें उस स्त्री की फीलिंग को दरकिनार किए कर दिया गया है की स्त्री किस से प्रेम करती है और क्या चाहती है। इस को ध्यान नहीं दिया गया है। फिल्म और कहानी में अन्तर यह है कि फिल्म सुखांत है और कहानी दुखांत। स्त्री की थोड़ी सी गलती के लिए उसके जीवन को नरक कर दिया गया है, जिसमें मनुष्यता को भी खो दिया गया है और उस स्त्री को गौशाला में गायों के बीच जंजीर से बांध दिया गया है। उस स्त्री का प्रयोग पूरे गांव का पुरुष वर्ग करता है। उसके शरीर को भोगने के लिए रोजाना एक नया आदमी आता है। आज के समाज में पुरुष उस स्त्री पर पशुवत व्यवहार करता है। आज के हमारे पितृसत्तात्मक समाज में यह विडंबना है कि भारतीय समाज में स्त्रियों का इतिहास पुरुषों के द्वारा लिखा गया है जो कभी एक स्त्री के दर्द को नहीं जान सके। भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह कहा जा सकता है कि स्त्रियों का जितना ज्यादा महिमामंडन किया गया है उतना ही बेरहमी से कुचला भी गया है। "नहीं हुई, तब तक हालत और बदतर हो गई थी। अब लड़कियां कहीं नहीं थी। सारे रंग बुझ गए थे। अब हर तरफ एक ही रंग था, स्याह रंग। मेरी शादी किसी लड़की से नहीं हुई, बल्कि एक औरत से हुई थी, औरत, जो मुझसे काफी बड़ी थी। शादी भी क्या हुई थी, बस वो आकर रहने लगी थी घर में। बदले में उसके पति को उस बच्ची हुई जमीन में से काफी कुछ देना पड़ा था। उसका पति भी उसको ऐसे ही लाया था। तो वह औरत मेरे पास आ गई और उससे ही पैदा हुआ था इसका बाप।"(दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १५३) "इसका बाप जब बड़ा हुआ जवान हुआ, तब तक सब खत्म हो चुका था। कुछ नहीं था। शादी जैसा तो कुछ सोचा भी नहीं जा सकता था। सोचते भी कैसे, और किससे। इसको पैदा करने के लिए इसकी मां को किराए पर लिया था मैंने।" (दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १५४-५५)

"और फिर यह पैदा हो गया। औरत के आने से दस महीने बाद। औरत साल भर के लिए आई थी। अगर ये नहीं आता तो भी साल भर ही रुकती। बीच में छह महीने बाद उसका बाप आकर फिर से पैसा ले गया था। बाकी आधे का आधा। बीज इसके बाप का था, इसलिए यह उसका बेटा है और कोख उस औरत की थी, इसलिए वह इसकी मां थी, बस। बस, मगर उसको तो जाना था। अब कहीं और, किसी और को पैदा करने। यही तो उसका काम था। उसका या शायद उसके बाप का। बिना रुके चलते जाना।"(दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १५६)

वर्तमान समय में सरकार बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ का अभियान चला रही है। लेकिन सरकार को शायद यह नहीं मालूम की जब तक व्यक्ति अपनी गंदी मानसिकता को नहीं छोड़ेगा तब तक कितना भी योजनाएँ चलाईं जाए कोई फर्क नहीं पड़ने वाला। इससे तो पुरुषों को और फैयदा होगा। उन्हें एक बच्चा पैदा करने वाली मशीन मिल जाएगी। कारखानों की मशीनों को भी खराब होने की डर से समय- समय पर रेस्ट दिया जाता है, लेकिन यहाँ एक स्त्री को मशीन से भी ज्यादा गई गुजरी समझा जाता है। मनुष्य के जीवन का सफ़र बहुत ही लम्बा है। जीवन को काटने के लिए किसी की आश्रय की जरुरत पडती है।

" वैसे ही जैसे इसके बाप ने किया था। वैसे ही जैसे ये हुआ था। तरीका तो वही है, अब उसके अलावा और है ही क्या। अब ये जरूर है कि दाम और बढ़ गए, लेकिन जरूरत भी कभी दाम देखती हैं। जरूरत है तो दाम है।" (दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १५९)

अब इससे ज्यादा त्रासदी और क्या होगी। सौ-पचास गांवों में ढुढ़ने पर भी कोई औरत नहीं मिल रही। मेरा मानना है कि ये त्रासदी वास्तव में कामायनी से ज्यादा ही भयवाह है। जब हमारे बाप दादाओं को यह मालूम था कि एक स्त्री का पुरुष के जीवन में क्या महत्व है, तो थोड़ी सी लालच के बतौर उसको खत्म करना शुरू कर दिया। " है कोई। गांव का बटियादार बता रहा था कि दूर कहीं कोई औरत है उसकी रिश्तेदारी में। अभी पिछले महीने उसका फोन आया था तो बता रहा था,..... कहता था कि पैसा ज्यादा लगेगा। इस विशाल अवसाद को बूढ़े के अन्तिम वाक्य में महसूस किया जा सकता है कि एक स्त्री के बिना पुरुष का जीवन कैसा होता है "(दो एकांत,पृष्ठ संख्या- १५९-१६०) बूढ़े ने दूसरे युवक के हाथ पर कुछ दबाव बढ़ा दिया और उसी टूटे स्वर में बोला, "वो....आखरी औरत भी पिछले हफ्ते मर गई। "(दो एकांत, पृष्ठ संख्या- १६३)

मकान के दो सिरे होतें है और दोनों के ही दो एकांत', इसी तरह व्यक्ति के जीवन में भी एक पीढ़ी दुसरे से पीढ़ी जूड़ा होता है। और दोनों सिरा का अपना- अपना सिरा होता है। और वो दोनों सिरे दो एकांत' को जोड़ता है। कथाकार पंकज सुबीर इस कहानी में यह दिखाने की कोशिश करतें हैं अगर हम अभी भी नहीं सम्भलें तो जिस तरह इस कहानी में युवा और बुजुर्ग के बीच दो एकांत' का जीवन रहा। तो उसी तरह बहुत ही जल्द वह समय हमारे सामने भी होगा

निष्कर्ष :

पंकज सुबीर की कहानी 'दो एकांत' का रचना शिल्प विधान फ्लैशबैक शैली पर की गई है। पितृसत्तात्मक समाज का पुरुष यह भूल जाता है कि एक स्त्री के अपने सपने होते हैं। उसका भी अपना जीवन है। पितृसत्ता की सोच सिर्फ संतानेच्छा ही रही है। जिसके ऐतिहासिक और सामाजिक अनेक प्रमाण है। स्त्री-पाठ दुनिया की सबसे पुरानी सभ्यता है। स्त्री-पाठ का इतिहास बहुत ही पुराना है। 'दो एकांत' कहानी की कथा अपने संरचनात्मक विशिष्टता में अतीत के परिवेश में वर्तमान को भी समाहित कर लेती है। इस कहानी की थीम को जयशंकर प्रसाद की रचना कामायनी से मिलाकर देखा जा सकता है। इस कहानी में मातृसत्तात्मक तथा पितृसत्तात्मक समाज की झलक देखी जा सकती है और आदिम सभ्यता से लेकर आधुनिक ज्ञान-विज्ञान एवं मशीनीकरण के विकास को सूक्ष्म सांस्कृतिक स्थितियाँ भी परिलक्षित हो रही हैं। स्त्री सृष्टि की अधिष्ठात्री रही है। मनुष्य के जीवन में सुख-सहवास का कारण स्त्री ही रहीं हैं। मानव जीवन की अंतिम स्त्री या पहली स्त्री कौन है? मानव जीवन में स्त्री के लिए क्या जगह है। स्त्री के सृष्टि की नियति चक्र है। स्त्री का सृष्टि को चलाने में महत्वपूर्ण भूमिका है। समकालीन सुप्रसिद्ध कथाकार पंकज सुबीर की कहानी बड़े बखुबी से इन सभी बिन्दुओं को रेखांकित करतीं हैं और यह भी आगाह करतीं हैं कि पुरुष के जीवन में एक स्त्री की भूमिका क्या होती है।

पंकज सुबीर दो एकांत' कहानी के माध्यम से यह कहना चाहते हैं कि, स्त्री के लिए शिक्षा, स्वतंत्रता,अधिकार ये सब बाद की प्रक्रिया है, पहले उसे मनुष्य की तरह जीवित रखना बहुत जरूरी है। पहले तो उसे मानव समाज में जीवित रखना बहुत जरूरी है, जिससे इस सृष्टि के संचालन में और एक नए सभ्यता के निर्माण में उसका योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण रहा है और रहेगा।

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

आधार- ग्रन्थ

१- महुआ घटवारिन और अन्य कहानियाँ, पंकज सुबीर,(दो एकांत) सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण- 2012

सहायक- ग्रन्थ

१- कामायनी, जयशंकर प्रसाद, श्यामा प्रकाशन संस्थान इलाहाबाद

२- स्त्रियों की स्वाधीनता, राधा मोहन गोकुल जी, राहुल फाउंडेशन लखनऊ- 2013, पृष्ठ- संख्या- 11,

३- वहीं- 12

४- वहीं- 49

५- वहीं -53

६- थामेगा नहीं विद्रोह, उमराव सिंह जाटव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2008, पृष्ठ संख्या- 171

७- वहीं- 213

८- वहीं- 229

९- ए नेशन्स विदाउट वुमेन- फिल्म

१०- देह की राजनीति से देश की राजनीति तक,मृणालपाण्डे,राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली,चौथा संस्करण,2019,पृष्ठ-13